

उपनिषदों में आत्मा और ब्रह्म की अवधारणा

डॉ संजु गर्ग,

व्याख्याता (संस्कृत) राजकीय महाविद्यालय,

बहरोड़, जिला - अलवर

सार

आत्मा और ब्रह्म की अवधारणा उपनिषदों की मुख्य दार्शनिक शिक्षा है, जो भारतीय आध्यात्मिक विचार में सबसे गहन अंतर्दृष्टि में से एक का प्रतिनिधित्व करती है। आत्मा अंतरतम स्व या आत्मा को संदर्भित करती है- शाश्वत, अपरिवर्तनीय, और भौतिक या मानसिक पहचान से परे- जबकि ब्रह्म परम, अनंत वास्तविकता है जो ब्रह्मांड का आधार है और उसमें व्याप्त है। उपनिषद के ऋषि इस बात पर जोर देते हैं कि सर्वोच्च आध्यात्मिक सत्य आत्मा और ब्रह्म की आवश्यक एकता को समझने में निहित है, एक ऐसा अहसास जो प्रसिद्ध महावाक्य (महान कहावत) "तत् त्वम् असि" (वह तू है) में समाहित है। यह गैर-द्वैतवादी दृष्टिकोण, विशेष रूप से छांदोग्य और बृहदारण्यक उपनिषद जैसे ग्रंथों में विकसित हुआ है, यह सिखाता है कि सच्चा स्व (आत्मा) ब्रह्मांडीय निरपेक्ष (ब्रह्म) से अलग नहीं है; बल्कि, वे एक और एक ही हैं। आत्मनिरीक्षण, ध्यान और आत्म-जांच के माध्यम से, साधक को इस एकता को समझने के लिए व्यक्तित्व और भौतिक आसक्ति के भ्रम से ऊपर उठने का आग्रह किया जाता है। यह अनुभूति मुक्ति (मोक्ष) की ओर ले जाती है- जन्म और मृत्यु (संसार) के चक्र से मुक्ति। इन अवधारणाओं की अमूर्त प्रकृति अनुभवजन्य समझ को चुनौती देती है, दार्शनिक विचार को गहन चिंतनशील और अनुभवात्मक आयाम की ओर धकेलती है। इस प्रकार आत्मा-ब्रह्म के उपनिषद सिद्धांत ने न केवल हिंदू धर्म की आध्यात्मिक नींव को आकार दिया, बल्कि वेदांत जैसी विभिन्न भारतीय दार्शनिक प्रणालियों को भी गहराई से प्रभावित किया, जबकि चेतना, अस्तित्व और जीवन के अंतिम उद्देश्य को समझने के लिए एक सार्वभौमिक ढांचा पेश किया।

खोजशब्द :- आत्मन, ब्रह्म, अद्वैतवाद (अद्वैत), मोक्ष (मुक्ति), महावाक्य, आत्म-साक्षात्कार

परिचय

800 और 400 ईसा पूर्व के बीच रचित उपनिषद, वैदिक परंपरा की दार्शनिक और आध्यात्मिक परिणति का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये प्राचीन ग्रंथ अस्तित्व, स्वयं और ब्रह्मांड की प्रकृति के बारे में गहन आध्यात्मिक प्रश्नों का पता लगाते हैं। उपनिषदिक दर्शन के केंद्र में दो परस्पर जुड़ी अवधारणाएँ हैं - आत्मा और ब्रह्म - जो वास्तविकता और मानवीय अनुभव के सार को परिभाषित करती हैं। आत्मा और ब्रह्म पर उपनिषदों की शिक्षाओं ने न केवल हिंदू दर्शन को प्रभावित किया है, बल्कि वेदांत, योग और यहाँ तक कि बौद्ध और जैन सिद्धांतों के कुछ पहलुओं के विकास सहित व्यापक भारतीय विचार को भी आकार दिया है।

आत्मा का तात्पर्य व्यक्तिगत आत्म, आत्मा या किसी व्यक्ति के सच्चे सार से है। उपनिषदों में, आत्मा को शाश्वत, अविनाशी और शरीर और मन की सीमाओं से परे बताया गया है। यह केवल भौतिक शरीर या अहंकारी व्यक्तित्व नहीं है, बल्कि

किसी व्यक्ति के अस्तित्व का मूल है - एक अपरिवर्तनीय, शुद्ध चेतना जो भौतिक दुनिया से परे है। उपनिषद के ऋषि इस बात पर जोर देते हैं कि आत्मा सुख और दुख, जन्म और मृत्यु या अच्छाई और बुराई जैसे द्वंद्वों से परे है। यह मनुष्य का वह हिस्सा है जो परम, अनंत वास्तविकता से जुड़ा हुआ है। इस तरह, आत्मा प्रत्येक व्यक्ति के सबसे गहरे स्व का प्रतिनिधित्व करती है, जो ब्रह्मांडीय सत्य का प्रतिबिंब है। दूसरी ओर, ब्रह्म परम, अपरिवर्तनीय वास्तविकता है जो सभी अस्तित्व का स्रोत है। आत्मा के विपरीत, जो व्यक्तिगत आत्मा को संदर्भित करता है, ब्रह्म सार्वभौमिक चेतना का प्रतिनिधित्व करता है, जो सृजन, संरक्षण और विघटन के पीछे की सर्वव्यापी शक्ति है। उपनिषदों में, ब्रह्म को निराकार, अनंत और मानवीय समझ से परे बताया गया है। यह हर जगह, हर चीज में मौजूद है, और वह सार है जो पूरे ब्रह्मांड को बनाए रखता है। आत्मा और ब्रह्म के बीच का संबंध उपनिषदों की आध्यात्मिक शिक्षाओं का केंद्र है। इन ग्रंथों के माध्यम से दिया गया मुख्य संदेश यह है कि आत्मा, व्यक्तिगत आत्मा, ब्रह्म, सार्वभौमिक वास्तविकता से अलग नहीं है। वास्तव में, वे एक ही हैं, एक गहन एकता जो स्वयं और ब्रह्मांड के बीच स्पष्ट द्वंद्व से परे है।

उपनिषदों की प्रमुख शिक्षाओं में से एक महावाक्य या "महान कथनों" में समाहित है, जिसमें "तत् त्वम् असि" (वह तू है), "अहम् ब्रह्मास्मि" (मैं ब्रह्म हूँ) और "प्रज्ञानं ब्रह्म" (चेतना ही ब्रह्म है) जैसे वाक्यांश शामिल हैं। ये अभिव्यक्तियाँ उपनिषदों की मूल दार्शनिक अंतर्दृष्टि को समाहित करती हैं: व्यक्तिगत स्व (आत्मा) और ब्रह्मांडीय वास्तविकता (ब्रह्म) दो अलग-अलग संस्थाएँ नहीं हैं, बल्कि आंतरिक रूप से जुड़ी हुई हैं। इस एकता की प्राप्ति आध्यात्मिक मुक्ति या मोक्ष की ओर ले जाती है, जो जन्म, मृत्यु और पुनर्जन्म (संसार) के चक्र से मुक्ति है। मोक्ष आत्म-साक्षात्कार, आत्मा और ब्रह्म की एकता की एक गहन, अनुभवात्मक समझ के माध्यम से प्राप्त होता है।

आत्मा और ब्रह्म को समझने की यात्रा केवल बौद्धिक ही नहीं, बल्कि अनुभवात्मक भी है। उपनिषद स्वयं की वास्तविक प्रकृति को उजागर करने के लिए ध्यान, आत्मनिरीक्षण और आत्म-जांच के महत्व पर जोर देते हैं। इन अभ्यासों के माध्यम से, व्यक्ति अलगाव के भ्रम से ऊपर उठ सकता है, यह पहचानते हुए कि उसके भीतर आत्मा वही है जो पूरे ब्रह्मांड में व्याप्त है। कहा जाता है कि यह अहसास एक गहरा परिवर्तन लाता है - एक आंतरिक शांति और सद्भाव जो अनंत के साथ अपने आंतरिक संबंध की पहचान से उत्पन्न होता है।

इसके अलावा, वास्तविकता के बारे में उपनिषदिक दृष्टिकोण केवल धार्मिक अटकलों से परे है; यह एक दार्शनिक प्रणाली प्रदान करता है जो व्यक्तियों को चेतना, अस्तित्व और परम सत्य की प्रकृति का पता लगाने के लिए आमंत्रित करता है। भौतिकवाद, उपभोक्तावाद और बाहरी विकर्षणों के प्रभुत्व वाली दुनिया में, उपनिषदों की शिक्षाएँ भीतर देखने और भौतिक क्षेत्र से परे गहरे सत्य की खोज करने के लिए एक कालातीत अनुस्मारक के रूप में काम करती हैं। उपनिषदों में आत्मा और ब्रह्म की अवधारणाएँ वास्तविकता, स्वयं और ब्रह्मांड की प्रकृति के बारे में सबसे गहन अंतर्दृष्टि का प्रतिनिधित्व करती हैं। आत्मा और ब्रह्म की एकता को समझने और अनुभव करने से, व्यक्तियों को आध्यात्मिक मुक्ति, पारलौकिकता और ईश्वर के साथ अंतिम मिलन का मार्ग प्रदान किया जाता है। ये शिक्षाएँ समय और संस्कृतियों में गूंजती रहती हैं, जो जीवन, चेतना और अस्तित्व पर एक परिवर्तनकारी दृष्टिकोण प्रदान करती हैं।

उद्देश्य

1. उपनिषदों में आत्मा और ब्रह्म की अवधारणा का अध्ययन।

2. उपनिषदिक परम्परा में ध्यान, आत्म-जांच और आत्म-साक्षात्कार की ओर परिवर्तनकारी यात्रा के संदर्भ में आत्मा और ब्रह्म की एकता को समझने के व्यावहारिक निहितार्थों की जांच करना।

भारतीय दर्शन में आत्मा की अवधारणा

भारतीय दर्शन और रहस्यवादी शास्त्र में आत्मा से संबंधित संपूर्ण विमर्श को देखने के बाद, हम दो प्रकार की अवधारणाएँ पाते हैं

- 'आत्म' की अवधारणा।
- 'अ-आत्म' की अवधारणा।

'आत्म' की अवधारणा

वह अवधारणा जो मानती है कि 'आत्म' शाश्वत और अमर है, उसे 'आत्म' की आदर्श अवधारणा कहा जाता है जो उपनिषद, सदादर्शन, भगवद गीता, जैन धर्म, तंत्र शास्त्र, आयुर्वेद आदि में पाई जाती है। और एक-एक करके संबंधित अवधारणा पर चर्चा की जाएगी उपनिषदों में 'आत्म' की अवधारणा: आत्मा 'आत्म', उपनिषदिक विचार का केंद्रीय और चरम तत्व है जिसमें अधिकांश कथाएँ 'आत्म' और सभी चीजों की इसकी धारणा के इर्द-गिर्द घूमती हैं। इसलिए उपनिषद कुछ वाक्यांशों को स्पष्ट रूप से कहते हैं जैसे-

- "अहं ब्रह्मास्मि"-मैं ब्रह्म हूँ (बृहदारण्यकोपनिषद),
- "तत्त्वमसि" - आप वही हैं (छांदोग्योपनिषद),
- "अयमात्मा ब्रह्म" - 'स्वयं' ही ईश्वर है (माण्डुक्योपनिषद)
- "आत्मानम सिद्धि"-स्वयं को जानो (माण्डुक्योपनिषद) और
- "आत्मान अणोरण्यं महतो महीयम्" - 'स्वयं' सूक्ष्म और स्थूल तत्व (कठोपनिषद) का सूक्ष्म है।

और आगे, यह कहता है कि मूल रूप से 'आत्मा' शुद्ध चेतन और पारलौकिक सत्ता है, जो मन और शरीर से परे है। यह न केवल शाश्वत, अमर, सर्वशक्तिमान है बल्कि दुनिया में एक स्थायी तत्व भी है। और इस प्रकार भारतीय उपनिषद ने मुख्य रूप से 'अध्यात्मवाद' प्रकाशित किया है जो चार स्तंभों का आधार है- पहला: 'आत्मा' का सिद्धांत, दूसरा: पुनर्जन्म का सिद्धांत, तीसरा: कर्म या बंधन का सिद्धांत और चौथा: मोक्ष का सिद्धांत और यह भारतीय दर्शन का आधार भी है। मोक्ष के सिद्धांत में और हम उपनिषदों के विवरण से पाते हैं, शुद्ध 'आत्मा' और सर्वोच्च 'आत्मा' (ब्रह्म) दोनों एक ही सत्ता हैं, जब शुद्ध 'आत्मा' मन, शरीर, बुद्धि, इंद्रियों के संपर्क में आती है, और कर्म-बंधन से पूरी तरह से जुड़ जाती है, तो इसे अनुभवजन्य 'आत्मा' (जीवात्मा) या व्यक्तिगत 'आत्मा' कहा जाता है। और व्यक्तिगत-आत्मा तब तक पुनर्जन्म लेती है जब तक उसे मोक्ष नहीं मिल जाता। यहाँ मोक्ष का अर्थ है सभी प्रकार के शोकों, इच्छाओं और कर्म-बंधनों से पूरी तरह मुक्त

होना, जो कि व्यक्ति के 'स्व' का सर्वोच्च लक्ष्य है, जो कि सभी जन्म और मृत्यु से पूरी तरह मुक्त होना है। और इस प्रकार मोक्ष पूर्ण आत्मा एक शुद्ध आत्मा है जो हमेशा के लिए आनंद और शाश्वत सुख का आनंद लेती है।

माण्डूक्योपनिषद में चेतना की चार अवस्थाओं का वर्णन किया गया है:

जाग्रतावस्था (सचेत पूर्ण चेतना): यह व्यक्तियों की सामान्य चेतन अवस्था है, जिसमें व्यक्ति बाह्य जगत की ठोस और भौतिक वस्तुओं का उपभोग करता है, इसे "वैश्वानर" कहते हैं।

स्वप्नावस्था (स्वप्न चेतना): यह व्यक्तियों की स्वप्नावस्था है, जिसमें व्यक्ति आंतरिक जगत की सूक्ष्म और काल्पनिक वस्तुओं का उपभोग करता है, जिसे "तेजस" कहते हैं। इस अवस्था में हमारा 'स्व' शरीर से बाहर निकल जाता है और इच्छित स्थान पर स्वतंत्र रूप से विचरण करता है, जहाँ वह आनंद लेता है, खाना, खेलना, हँसना, कूदना, पढ़ना आदि। इस घटना के दौरान हमारा 'स्व' प्राण (श्वास) के माध्यम से शरीर से जुड़ा होता है।

सुषुप्तावस्था (गहरी नींद चेतना): यह व्यक्तियों की गहरी नींद चेतना अवस्था है जो स्वप्नावस्था के ठीक बाद आती है, जहाँ व्यक्ति कोई स्वप्न नहीं देखता, कोई अनुभव नहीं करता, आंतरिक या काल्पनिक वस्तुओं का कोई उपभोग नहीं करता, इसे "प्रज्ञा" कहते हैं।

तुरीयावस्था (परम चेतना): यह अचेतन और चेतना से परे पूर्ण चेतन अवस्था है। यह शुद्ध चेतना, आत्मचेतना, पूर्ण शांति, अद्वैत और सच्चिदानंद का स्वरूप है।

भगवद्गीता में आत्मा की अवधारणा

भगवद गीता, भारतीय दर्शन और अध्यात्म में सबसे अधिक पूजनीय और प्रभावशाली ग्रंथों में से एक है, जो आत्मा की अवधारणा को गहन और परिवर्तनकारी तरीकों से संबोधित करती है। महाभारत के संदर्भ में स्थापित गीता, राजकुमार अर्जुन और भगवान कृष्ण के बीच एक संवाद है, जो उनके सारथी और आध्यात्मिक मार्गदर्शक के रूप में कार्य करते हैं। पूरे पाठ में, कृष्ण धर्म (धार्मिकता), योग (आध्यात्मिक अनुशासन) और स्वयं की प्रकृति पर शिक्षा देते हैं, जिसमें आत्मा - व्यक्तिगत आत्मा या सच्चे स्व की गहन खोज शामिल है। भगवद गीता में आत्मा को हर जीवित प्राणी के शाश्वत, अविनाशी सार के रूप में समझा जाता है। अपने सबसे आवश्यक रूप में, आत्मा शुद्ध चेतना है, जो भौतिक शरीर और क्षणभंगुर मन से परे है। यह एक ऐसी अवधारणा है जो व्यक्तिगत व्यक्तित्व या अहंकार तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सच्ची, अपरिवर्तनीय वास्तविकता है जो सभी जीवित प्राणियों में व्याप्त है। आत्मा शाश्वत और अविनाशी है: गीता में कृष्ण द्वारा किए गए प्राथमिक कथनों में से एक यह है कि आत्मा शाश्वत है। अध्याय 2, श्लोक 20 में कृष्ण अर्जुन को समझाते हैं:

“आत्मा के लिए, कभी भी न तो जन्म होता है और न ही मृत्यु। ऐसा नहीं है कि यह अतीत में मौजूद नहीं थी, न ही यह भविष्य में कभी समाप्त होगी।”

यह श्लोक इस बात पर जोर देता है कि आत्मा जन्म और मृत्यु (संसार) के चक्र से परे है। भौतिक शरीर नष्ट हो सकता है, लेकिन आत्मा इस प्रक्रिया से अप्रभावित रहती है। यह अमर, अविनाशी और समय और स्थान की समझ से परे है। स्वयं के इस शाश्वत पहलू का बोध व्यक्ति को मृत्यु के भय और क्षणभंगुर दुनिया से लगाव को दूर करने में मदद करता है।

आत्मा सच्ची आत्मा के रूप में, शरीर और मन से अलग:

कृष्ण अर्जुन को सिखाते हैं कि आत्मा शरीर या मन नहीं है। अध्याय 2, श्लोक 13 में, वे बताते हैं:

“जिस तरह इस शरीर में देहधारी आत्मा को बचपन, जवानी और बुढ़ापा आता है, उसी तरह दूसरे शरीर में भी बचपन, जवानी और बुढ़ापा आता है; बुद्धिमान व्यक्ति इससे भ्रमित नहीं होता।”

यह रूपक आत्मा के एक शरीर से दूसरे शरीर में जाने की व्याख्या करता है। आत्मा किसी विशिष्ट भौतिक रूप या मानसिक अवस्था से बंधी नहीं है। शरीर जीवन के विभिन्न चरणों से गुजरता है, और मन विभिन्न विचारों और भावनाओं का अनुभव करता है, लेकिन आत्मा, सच्चा स्व, इन चरणों के माध्यम से स्थिर और अपरिवर्तित रहता है।

आत्मा और कर्म की प्रकृति:

भगवद गीता में प्रमुख शिक्षाओं में से एक कर्म की अवधारणा है - अपने कर्तव्य (धर्म) के अनुसार किया गया कार्य। कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि, जबकि शरीर और मन सांसारिक कार्यों में शामिल हैं, आत्मा स्वयं कर्मों से प्रभावित नहीं होती है। अध्याय 2, श्लोक 47 में कृष्ण कहते हैं:

“तुम्हारा अधिकार केवल अपने कर्तव्य को पूरा करना है, लेकिन उसके फल को कभी नहीं। कर्म के फल को अपना उद्देश्य मत बनाओ, न ही अकर्म के प्रति आसक्ति रखो।”

यहाँ कृष्ण वैराग्य के महत्व पर जोर देते हैं - परिणामों के प्रति आसक्ति के बिना अपने कर्तव्यों का पालन करना, यह समझना कि आत्मा कर्म के परिणामों से अप्रभावित रहती है। निस्वार्थ कर्म (कर्म योग) का अभ्यास करके, व्यक्ति शरीर और मन को सच्चे स्व (आत्मा) के साथ जोड़ता है, जिससे मुक्ति मिलती है।

सभी जीवों के साथ एकता का दर्शन:

अध्याय 10, श्लोक 20 में कृष्ण घोषणा करते हैं:

“मैं आत्मा हूँ, हे गुडाकेश, सभी प्राणियों के हृदय में विराजमान हूँ। मैं सभी प्राणियों का आदि, मध्य और अंत हूँ।”

यह श्लोक आत्मा के माध्यम से सभी प्राणियों की एकता को दर्शाता है। कृष्ण अर्जुन को बताते हैं कि आत्मा न केवल प्रत्येक व्यक्ति का सच्चा स्व है, बल्कि यह ब्रह्मांडीय वास्तविकता भी है जो सभी जीवों को जोड़ती है। इस एकता का बोध - सभी प्राणियों में आत्मा को पहचानना - करुणा, निस्वार्थता और अहंकार से परे जाने की ओर ले जाता है।

आत्मा और मुक्ति (मोक्ष):

भगवद गीता की शिक्षाओं का अंतिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्त करना है - जन्म, मृत्यु और पुनर्जन्म के चक्र से मुक्ति। कृष्ण कहते हैं कि आत्मा की वास्तविक प्रकृति को समझना, अहंकार से परे जाना और ईश्वर के साथ अपनी आवश्यक एकता को समझना मुक्ति का मार्ग है। अध्याय 2, श्लोक 70 में, कृष्ण कहते हैं:

"एक व्यक्ति जो इच्छाओं के निरंतर प्रवाह से विचलित नहीं होता है - जो अपनी इंद्रियों को उनकी वस्तुओं से दूर कर सकता है, जैसे कछुआ अपने अंगों को अंदर खींचता है - वह शांति प्राप्त करता है।"

यह महसूस करके कि आत्मा शरीर, मन या भौतिक इच्छाओं की सीमाओं से बंधी नहीं है, व्यक्ति आंतरिक शांति प्राप्त कर सकता है, सांसारिक विकर्षणों से अलग हो सकता है और अंततः मुक्ति प्राप्त कर सकता है।

न्याय-वैशेषिक एवं मीमांसा दर्शन में आत्मा की अवधारणा

सामान्यतः न्याय-वैशेषिक दर्शन स्वतंत्र रूप से विकसित हुआ है, लेकिन नाममात्र रूप से यह उपनिषदों से प्रभावित है। आत्मा की बहुत ही समान अवधारणा को न्याय-वैशेषिक एवं मीमांसा दर्शन द्वारा धिक्कारा गया। आत्मा एक पदार्थ है जो स्थायी गुण, अस्थायी गुण, ज्ञान और चेतना का आधार है। आत्मा स्वाभाविक रूप से अचेतन है अर्थात् अचेतनता इसका मूल स्वभाव है, जो निष्क्रिय और सचेतन रूप से शून्य है। इस प्रकार चेतना में आत्मा का आकस्मिक गुण है, न कि आवश्यक। आत्मा में चेतना का प्रवाह एक विशिष्ट स्थिति में होता है, जबकि आत्मा मन, इंद्रिय और बुद्धि के संपर्क में आती है, तब आत्मा चेतन हो जाती है। आत्मा केवल जाग्रतावस्था और स्वप्नावस्था में एक चेतन अवस्था के रूप में पाई जाती है, लेकिन सुषुप्तावस्था या समाधि में कोई चेतना नहीं होती। 'स्व', तब यह अपने मूल मॉडल (निष्क्रिय अवस्था) में प्रकट होता है, जबकि यह सुषुप्तावस्था (गहरी नींद की अवस्था) या समाधि (ट्रांस मोड) में रहता है। आत्मा शाश्वत, अनेक और स्थान और समय से परे है। यह कर्म के नियम के तहत है कि एक या अधिक आत्माएं एक शरीर में रह सकती हैं और इसे केवल शरीर के अंदर ही अनुभव किया जा सकता है।

निष्कर्ष

उपनिषदों में आत्मा और ब्रह्म की अवधारणा भारतीय आध्यात्मिक और दार्शनिक जांच के शिखर का प्रतिनिधित्व करती है, जो द्वैत और विखंडन से परे वास्तविकता की दृष्टि प्रदान करती है। उपनिषद के ऋषि सिखाते हैं कि आत्मा, अंतरतम स्व, ब्रह्म, अनंत और सर्वव्यापी ब्रह्मांडीय वास्तविकता से अलग नहीं है; बल्कि, वे एक और एक ही हैं - एक पहचान जो गैर-द्वैतवादी (अद्वैत) दर्शन की नींव बनाती है। "तत् त्वम् असि" (वह तू है) जैसे महावाक्यों के माध्यम से व्यक्त यह बोध साधक को अहंकार, शरीर और भौतिक अस्तित्व के भ्रम से परे आध्यात्मिक जागृति और मुक्ति (मोक्ष) की स्थिति में ले जाता है। इस बोध के मार्ग में गहन आत्मनिरीक्षण, आत्म-जांच और ध्यानपूर्ण अंतर्दृष्टि शामिल है, जो केवल बौद्धिक समझ पर सत्य की अनुभवात्मक प्रकृति पर जोर देती है। यह पहचान कर कि सच्चा स्व परम वास्तविकता के समान है, व्यक्ति भय, पीड़ा और अज्ञानता पर काबू पा लेता है, और सभी अस्तित्व के साथ शांति और एकता प्राप्त करता है। इस प्रकार, आत्मा और ब्रह्म की उपनिषदिक दृष्टि न केवल व्यक्तिगत और सार्वभौमिक के बीच की सीमाओं को समाप्त करती है, बल्कि चेतना, अस्तित्व और परम स्वतंत्रता के मार्ग को समझने के लिए एक कालातीत रूपरेखा भी प्रदान करती है।

संदर्भ

1. बार्थ.ए. (2000). भारत के धर्म. रॉल्लेज, पुनर्मुद्रित.
2. चंदर, एस. चैटर्ची. दाता, ट्रिडा. (2012). भारतीय दर्शन विद्यालयों का परिचय. यूनिवर्सिटी प्रेस. कुम.
3. साइप्रियन.एस. (2013). मिस्टर एकहार्ट ऑन यूनियन ऑफ मैन विद गॉड. इन मिस्टिक्स ऑर द बुक्स. एड. आर.ए. हेरेरा, न्यूयॉर्क, पीटर लैंग पब्लिशिंग.
4. दारा शोकोह, मोहम्मद, उपनिषद अनुवाद, एल्मी पब. तेहरान, 1388
5. दासगुप्ता.एस. (2012). हिंदू रहस्यवाद. यू.एस.ए.
6. दासगुप्ता.एस. (2013). भारतीय दर्शन का इतिहास. मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशक. दिल्ली.
7. इब्न अरबी. मोहिदीन. (2014). फूटोहाटोल माक्या. डेयर सैडर प्रकाशन। बिरूत.
8. हिरियाना. एम. (1993)। भारतीय दर्शन की रूपरेखा. मोतीलाल, दिल्ली।
9. जेम्स.डब्ल्यू. (1985). धार्मिक अनुभव की किस्में। आधुनिक पुस्तकालय इंक. न्यूयॉर्क.
10. महमूदी. अबोलफ़ज़ल, (2000)। दो क्षितिजों में पूर्व. विश्वविद्यालय प्रेस. कुम.
11. मायर्स. एम.ब्राह्मण (2011). तुलनात्मक धर्मशास्त्र कर्जन।
12. नवलखा. एस. (2013). उपनिषद का परिचय, वर्ड्सवर्थ क्लासिक्स पीएफ वर्ल्ड लिटरेचर।
13. ओटो आर (1976). रहस्यवाद पूर्व और पश्चिम. रहस्यवाद की प्रकृति का तुलनात्मक विश्लेषण, बर्था एल. ब्रेंसी और रिचेंडा सी. पेन द्वारा अनुवादित, न्यूयॉर्क, मैकमिलन पब्लिशिंग कंपनी.
14. पैरिंडर जी (1976). दुनिया में रहस्यवाद. धर्म प्रकाशन.
15. राधाकृष्णन एस (1991). भारतीय दर्शन. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस. ऑक्सफोर्ड.
16. राधाकृष्णन एस (2002). प्रमुख उपनिषदों पर परिचय. हार्पकोलिन्स. नोएडा. भारत.
17. राधाकृष्णन एस (1994). प्रमुख उपनिषद. परिचय पाठ के साथ संपादित. ह्यूमेनिटी प्रेस. अटलांटिक हाईलैंड.
18. स्मार्ट एन (1967). भारतीय दर्शन. दर्शनशास्त्र का विश्वकोश. पॉल एडवर्ड्स द्वारा संपादित. मैकमिलन कंपनी। न्यूयॉर्क।
19. सेल्स, एम. (1994)। अनकहेपन की रहस्यमयी भाषाएँ। शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस, शिकागो।